Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 02-06-2025, Accepted: 02-07-2025, Published: 17-07-2025
Volume 6, Issue 2, 2025, Page No. 1-3

संस्कृत बौद्ध काव्य और उनका लोकहितकारी सन्देश

Dr. Amrendra Kumar Mishra
सहाचार्य, साहित्य विभाग कालियाचक विक्रम किशोर आदर्श संस्कृतमहाविद्यालय पूर्व मेदिनीपुर, पश्चिम बंगाल, भारत

सारांश
बौद्ध संस्कृत काव्य परम्परा भारतीय साहित्य की एक विशिष्ट एवं हृदयस्पर्शी धारा है, जिसका मूल उद्देश्य मात्र काव्य सौन्दर्य या पाण्डित्य प्रदर्शन न होकर लोककल्याण एवं मानवोत्थान है। अश्वघोष, शांतिदेव, चन्द्रकीर्ति, नागार्जुन आदि महान बौद्ध कवियों ने अपने साहित्यिक सृजन को समाजोपयोगी संदेशों से परिपूर्ण किया। उन्होंने करुणा, शान्ति, मैत्री, भातृत्व, समत्व, दया और आत्मत्याग जैसे सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों को केन्द्र में रखकर काव्य रचनाएँ कीं। बौद्ध काव्यकारों की दृष्टि में संसार दुःखमय है तथा उसका कारण मोह, राग, द्वेष आदि क्लेश हैं। अतः इनसे मुक्ति दिलाने हेतु काव्य को एक साधन के रूप में प्रयुक्त किया गया। अश्वघोष की कृतियाँ बुद्धचरितम् तथा सौन्दरनन्द न केवल काव्य की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं, बल्कि इनमें धर्मोपदेश, इतिहास–बोध तथा सामाजिक संदेशों का भी समावेश है। उन्होंने लोक–परम्पराओं, व्यवहारों और सामाजिक चिन्तन को माध्यम बनाकर परमार्थ के सिद्धान्तों का उद्घाटन किया। बुद्धचरित में सिद्धार्थ के जन्म, त्याग, तपस्या और बुद्धत्व की प्राप्ति को आदर्श नायक के रूप में चित्रित किया गया है। वहीं सौन्दरनन्द में वैराग्य की ओर प्रवृत्त होने की प्रक्रिया को काव्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। बौद्ध साहित्य में शृंगार रस को गौण एवं शान्त रस को प्रधान माना गया है। जहाँ कालिदास व श्रीहर्ष जैसे कवियों ने शृंगार को मुख्य विषय बनाया, वहीं बौद्ध कवियों ने संयम, त्याग एवं शील को प्रतिष्ठा प्रदान की। जातकमाला, बोधिचर्यावतार, शून्यता सप्तति, तत्त्वसंग्रह इत्यादि ग्रन्थों में बोधिसत्व की करुणा, बुद्ध के उपदेशों की व्यवहारिकता तथा आत्मकल्याण–सहित लोककल्याण की महत्ता को रेखांकित किया गया है। बौद्ध काव्य की विशेषता यह भी है कि उसमें पांडित्य का प्रदर्शन नहीं, बल्कि भावात्मक संप्रेषण अधिक है। डॉ. रामायण प्रसाद द्विवेदी ने स्पष्ट किया है कि बौद्ध कवियों का काव्य न स्वान्तःसुखाय है, न ही लौकिक कामनाओं की पूर्ति के लिए। यह काव्य समाज में संतुलन लाने, दुःखी प्राणियों के दुःख निवारण की भावना से ओतप्रोत है। उन्होंने इसे अत्यधिक स्वाभाविक, सरल, गम्भीर, और कलापक्ष की अपेक्षा भावपक्ष में समृद्ध माना है। इस काव्य परम्परा की तुलना यदि विश्व साहित्य की किसी भी परम्परा से की जाए, तो यह उसमें समता रखने में पूर्ण सक्षम है। यहाँ उपमाओं की अनुपमता, भाषा की सहजता, कथन की मधुरता और लोकजीवन की व्यापक अभिव्यक्ति स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

मूल शब्दः बौद्ध संस्कृत काव्य, अश्वघोष, बुद्धचरितम्, सौन्दरनन्द, शान्त रस,करुणा,लोककल्याण,बोधिसत्व, बौद्ध दर्शन, जातकमाला, सामाजिक चेतना,संयम,वैराग्य,शीलदृसंयमदृसमता ।

उपक्रम

संस्कृत साहित्य विश्व साहित्य में एक अत्यंत समृद्ध और विशाल परंपरा के रूप में प्रतिष्ठित है। वैदिक युग से लेकर उत्तरवर्ती कालों तक, संस्कृत भाषा ने दर्शन, धर्म, नीति, काव्य और विज्ञानकृसभी क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान दिया है। इस साहित्यिक परंपरा में न केवल हिन्दू धर्म का प्रतिपादन हुआ, अपितु बौद्ध और जैन जैसे अन्य धार्मिक मतों को भी उचित स्थान मिला।

संस्कृत काव्य परंपरा को समृद्ध बनाने वाले कालिदास, भारवि, भवभूति, दण्डी, श्रीहर्ष आदि महाकवियों के अतिरिक्त बौद्ध आचार्य और कवि भी कम महत्वपूर्ण नहीं रहे। बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए संस्कृत में अनेक रचनाएं की गईं, जिनमें अश्वघोष द्वारा रचित बुद्धचरित, सौन्दरनन्द जैसे महाकाव्य अत्यंत प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त नागार्जुन, बुद्धघोष, धर्मकीर्ति, दिङ्नाग, शांतिरक्षित आदि कवियों ने भी संस्कृत बौद्ध काव्यधारा को गहराई प्रदान की।

इन काव्यों की विशेषता यह है कि इनकी रचना केवल काव्य–कौशल प्रदर्शन या साहित्यिक प्रतिभा दिखाने के लिए नहीं की गई, बल्कि मानव समाज को उचित मार्गदर्शन देने के उद्देश्य से की गई। अश्वघोष के बुद्धचरित में स्पष्ट रूप से यह दृष्टि प्रकट होती है कि बुद्ध की जीवनगाथा के माध्यम से जनमानस को आत्मकल्याण और लोकहित के पथ पर अग्रसर किया जाए।

बौद्ध कवियों का उद्देश्य न तो पांडित्य का प्रदर्शन करना था और न ही काव्यकला की चमत्कारिता दिखाना। उन्होंने अपनी रचनाओं को किसी वैयक्तिक आत्मतोष या कलात्मक प्रतिस्पर्धा के लिए नहीं रचा, बल्कि उनके समक्ष सामाजिक और मानवीय समस्याएँ थीं, जिनका समाधान उन्हें साहित्य के माध्यम से करना था।

उनकी रचनाओं के मूल में यह चिंता थी किकृ समाज में व्याप्त असंतुलन को समाप्त कर संतुलन की स्थापना कैसे हो। वैमनस्य और विद्वेष की भावना से ग्रसित समाज में एकता, भ्रातृत्व और प्रेम का बीज किस प्रकार बोया जाए। बौद्ध काव्यों में जिन बोधिसत्वों का चित्रण किया गया है, वे न तो किसी राज्यलाभ की कामना करते हैं और न ही स्वर्ग जैसे दिव्य सुखों की लालसा रखते हैं। उनका एकमात्र उद्देश्य है – पीड़ित, दुःखी, आर्तजनों के दुःखों का निवारण करना।

बौद्ध संस्कृत साहित्य की समालोचना करते हुए डॉ० रामायण प्रसाद द्विवेदी का यह मत है कि बौद्ध काव्यों की रचना स्वान्तः सुखाय नहीं हुई, जैसा कि कालिदास, तुलसीदास आदि कवियों की रचनाओं में देखा जाता है, बल्कि ये काव्य उस सांसारिक व्यक्ति के लिए लिखे गए हैं जो विषय–भोग में लिप्त होकर अपने जीवन के वास्तविक उद्देश्य से विमुख हो गया है। महाकवि अश्वघोष की कृतियाँ भगवान बुद्ध के प्रति श्रद्धा और सम्मान से ओतप्रोत हैं, जो शाक्यमुनि द्वारा प्रतिपादित धर्म के अनुरूप मानवता के कल्याण और सुख के लिए रची गई हैं। इनका उद्देश्य काव्य–कौशल का प्रदर्शन नहीं, बल्कि मानवता को धर्मपथ पर चलाने का प्रेरणादायक उपदेश देना है। बुद्धचरित (२८/७४) में इस उद्देश्य की पुष्टि होती है।

बौद्ध काव्य परम्परा में लोक व्यवहार को आधार बनाकर परमार्थ की बात कही गई है। अश्वघोष की काव्यधारा का मूल्यांकन

करते हुए डॉ० द्विवेदी कहते हैं कि उनकी रचनाओं में महाकाव्य, नीतिकाव्य, कथाकाव्य, श्रव्यकाव्य एवं दृश्यकाव्य जैसे सभी प्रमुख काव्यप्रकारों के उदाहरण स्पष्ट रूप से मिलते हैं।

महावस्तु ग्रंथ के प्रयोजन को स्पष्ट करते हुए यह कहा गया है कि उसमें दिए गए शिक्षाप्रद एवं प्रभावशाली आख्यानों के माध्यम से श्रोताओं के हृदय में आदर्श विचारों का संचार हो सके, वे अनुकरणीय मार्ग अपना सकें और अशुभ प्रवृत्तियों से विमुख होकर शुभ प्रवृत्तियों की ओर उन्मुख हो सकें।

महान बौद्ध कवि शांतिदेव ने अपनी रचनाओं शिक्षासमुच्चय एवं बोधिचर्यावतार में इस भावना को व्यक्त किया है कि वे समाज रूपी रोगी का वैद्य बनकर सेवा करना चाहते हैं, पीड़ितों के कष्टों के निवारण हेतु औषधि बनना चाहते हैं। वे न केवल अपने मित्रों या उपकारियों के लिए बल्कि शत्रुओं और विरोधियों के लिए भी निर्वाण प्राप्ति की कामना करते हैं।

उनकी गहन आकांक्षा है कि उन्होंने अपने पुण्यकर्मों से जो भी शुभ फल अर्जित किए हैं, वे समस्त दुःखी प्राणियों के कष्टों का अंत करें और उन्हें शांति का अनुभव हो–

"एवं सर्वमिदं कृत्वा यन्मया साधितं शुभम् ।

तेनास्यां सर्वभूतानां सर्वदुःख प्रशान्तिकृत् ॥" (बोधिचर्यावतार ३/६)

कवि यह स्वीकार करता है कि जब वह दूसरों का दुःख देखता है, तो उसे ऐसा प्रतीत होता है मानो वह उसका स्वयं का दुःख हो, और उसे दूर करने का प्रयत्न भी उसी भाव से करता है। वह यह मानता है कि अपने और दूसरों के सत्व (जीव) में कोई भेद नहीं है, इसलिए जैसे वह अपने लिए कल्याण चाहता है, वैसे ही सभी प्राणियों पर अनुग्रह करना भी उसका कर्तव्य है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध कवि का हृदय करुणा, सहानुभूति, परोपकार और उदारता की भावना से पूर्ण होता है। वह केवल साहित्य की परंपरा को निभाने के लिए नहीं, बल्कि उस परंपरा में मानवीय संवेदना को प्रवाहित करने के लिए रचना करता है।

अश्वघोष न केवल एक समर्थ कवि थे, बल्कि वे विचारक, तत्त्ववेत्ता, तर्कशास्त्र के ज्ञाता, साधक और उपदेशक भी थे। उनकी रचनाएं बौद्ध दर्शन के साथ–साथ प्राचीन भारतीय संस्कृति और इतिहास का भी परिचय देती हैं। उनकी लेखनी में जहाँ एक ओर सौन्दर्य का सरस चित्रण है, वहीं दूसरी ओर धर्म और नीति का गहन शिक्षण भी है।

अश्वघोष ने संस्कृत साहित्य के विविध अंगों को अपनी लेखनी से समृद्ध किया। बुद्धचरितम्, सौन्दरनन्द, शारिपुत्रप्रकरण, गाडिस्तोत्रम्, तथा गाथाएँ उनकी बहुपक्षीय प्रतिभा और पांडित्य का परिचायक हैं। इन रचनाओं में नाद–सौंदर्य और संगीतात्मकता की छवि स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

अश्वघोष न केवल एक कवि थे, बल्कि वे विचारक, महान दार्शनिक, तर्कविद्, साधक, शिक्षक और धर्मोपदेशक भी थे। उनके ग्रंथों से प्राचीन साहित्य एवं इतिहास के गहन ज्ञान का भी परिचय मिलता है।

बुद्धचरितम् में यह वर्णन है कि जैसे और्व का जन्म जांघ से, पृथु का हाथ से, इन्द्र मन्धाता के मस्तक से और कक्षीवन का कोख से हुआ, वैसे ही सिद्धार्थ का जन्म पार्श्व से हुआ – ष्बुद्धचरितम् १/१०"

उसी ग्रंथ के अन्य श्लोकों में लोकायतिक परंपरा के सिद्धांतों पर भी विस्तार से विचार किया गया है – ष्बुद्धचरितम् १/९–१२"

सौन्दरनन्द में यह प्रतिपादन मिलता है कि यदि कड़वी औषधि को मधुर रस के साथ न दिया जाए, तो वह ग्राह्य कैसे बन सकेगी – ष्सौन्दरानन्दम्. १८/६३"

बोधिसत्त्व के विषय में जातकमाला में यह उद्घोषणा की गई है कि उन्होंने केवल लोककल्याण के लिए ही शरीर धारण किया – ष्अमूनि मांसानि संशोणितानि धृतानि लोकस्य हितार्थमेव ।" – जातकमाला ८२५

"कुरु तत्कर्म येन लोके हितं भवेत् ।" – बुद्धचरितम् १३/२०

बोधिचर्यावतार में यह सिद्धांत प्रतिपादित है कि लोकव्यवहार का सहारा लेकर ही गहन तत्त्वों की विवेचना की जाती है कृ "प्रसिद्धिमाश्रित्य विचारः सर्व उच्यते ।" – बोधिचर्यावतार ९/१०९

इसी भाव को शून्यता सप्तति में भी कहा गया है –

"लोकवर्तनमाश्रित्य सर्वं नाना यथार्थतः ।" –शून्यता सपातिः ६६

लोकबुद्धि की सीमाओं को इंगित करते हुए लोकविवृत्तिप्रकरण में कहा गया है कि –

षधिक् अबुधबालजनस्य बुद्धि यद्यौवनेन महमत्त जरां न पश्येत् ।" कृ ललितविस्तर. १४/५६

बोधिचर्यावतार में यह उपदेश है कि जो लोक में निंदनीय हो, उसे स्वयं देखकर छोड़ देना चाहिए कृष्लोकप्रासाद" –बोधिचर्यावतार. ५/६३

चन्द्रकीर्ति शास्त्र में यह प्रतिपादित है कि धर्म से भी बलवान लोक की परंपरा होती है –

"धर्म अपि ततो लोको बलवानिव दृश्यते ।" –चतुःशतम् १६

लौकिक देशना को प्रवृत्ति का उपदेश कहा गया है कृ

ष्लौकिको देशना यत्र प्रवृत्तिस्तत्र वर्ण्यते ।" – चतुःशतम् १८५

तत्त्वसंग्रह में यह कहा गया है कि भगवान् बुद्ध विवाहादि संबंधों से मुक्त थे; उन्होंने लोककल्याण की दृष्टि से ही उपदेश दिए –

"नैवावाहविवाहादिसम्बन्धो वाञ्छितो हि तैः। उपकारस्तु कर्तव्यः साधुगीतमिदं ततः।" – तत्त्व संग्रह

देशकालविचार का उपदेश सौन्दरनन्द में इस प्रकार दिया गया है –

"देश एवं काल तथा योग की मात्रा एवं उसके उपाय की विधिवत् परीक्षा करके प्रयत्न करना चाहिए।" –सौन्दरानन्दम १६५२

राजाओं की दुर्नीति के परिणाम उनके अनुयायियों में अवश्य परिलक्षित होते हैं –

"जातकमाला ९.१९"

दुःख तो सहज ही प्राप्त होते हैं, जबकि सुख प्रयत्नपूर्वक भी नहीं मिलता –

"सौन्दरानन्दम. ९.३९"

बुद्धचरितम् में यह लोक–भावना प्रदर्शित होती है कि धर्म के निमित्त उत्तर दिशा की ओर जाना उचित है, दक्षिण की ओर एक पग भी नहीं कृष्बुद्धचरितम७.४१"

युद्ध, भोग और धन में साथी मिल जाते हैं, लेकिन विपत्ति में धर्म का आश्रय लेने वाला मित्र दुर्लभ होता है – "पुरुषास्तु दुर्लभाः सहायाः पतितस्यायदे धर्मसंश्रये वा ।" – बुद्धचरितम५/७३

बुद्ध का अभिनिष्क्रमण आत्मकल्याण और लोककल्याण दोनों के लिए था – "बुद्धचरितम् ५/७८"

अनुकूलता में सब साथ देते हैं, प्रतिकूलता में स्वजन भी पराये हो जाते हैं। बिना प्रयोजन कोई मेल नहीं होता, पुत्र वंशवृद्धि के लिए तथा पिता सेवा हेतु पालन करते हैं – "बुद्धचरितम् ६/१०"

शोक त्यागियों पर नहीं, रागी और भोगासक्त जनों के लिए किया जाना चाहिए – "बुद्धचरितम् ६६/१८"

धन के दायाद भले मिलें, लेकिन पृथ्वी पर धर्म के उत्तराधिकारी दुर्लभ होते हैं – "बुद्धचरितम६/२०"

धर्म के लिए कोई समय अनुपयुक्त नहीं – "बुद्धचरितम् ६/२१ष

जो सद्धर्म का परित्याग करता है, वही नास्तिक है – ष्बुद्धचरितम् ६/३१"

छन्दक का कथन – जैसे नास्तिक सद्धर्म को, कृतघ्न सत्य को, व्यसनी यश को छोड़ता है, वैसे ही स्वामी को त्यागना उचित नहीं है। कन्थक कहता है कि मेरी गति केवल आपके चरणों में है।

संयोग का वियोग निश्चित है, जैसे पक्षी या बादल मिलकर बिछड़ जाते हैं –

"बुद्धचरितम् ६/४७–४८"
सत्य वचन बोलने वाला लोकनायक कहलाता है –
"अनन्यथावादिनः लोकनायकाः" – स.पु.सू. २.७०
"स नायकोऽनुत्तरमार्गदर्शकः" – ल.वि.सू. १५
मित्र की उपेक्षा विपत्तियों का कारण बनती है कृ
"मित्रवाक्य मनादृत्य विपद्भिरभिभूयते ।"–बुद्धचरितम२८/५३
मित्र के तीन लक्षण हैं – हित की प्रेरणा देना, अनहित से रोकना, और संकट में साथ न छोड़ना –
"बुद्धचरितम४/६४"
मार्गदर्शन का उत्तरदायित्व निर्दिष्ट करने वाले पर नहीं आता –"निर्दिष्टोऽपि हि सन्मार्गे..."– बुद्धचरितम२६/७७
मात्रा पालन, अच्छे कर्मों का आरंभ, वृद्धावस्था, व्याधि, मृत्यु – सभी लोक के लिए भय का कारण हैं कृष्सौन्दरानन्दम्. १५/४६"
संसार चक्र की तरह घूमता और असुरक्षित है –"बुद्धचरितम१४/५"
लोक झूठ की तरह है, जैसे आकाशकुसुम कृष्ललितविस्तरसूत्र. ५. २.१"
लज्जा को शील का भूषण कहा गया है –
"कामस्यावरणं लज्जा तथा शीलस्य भूषणम..." –बुद्धचरितम२६/४८
आठ लोकधर्मों की चर्चा – लाभ–अलाभ, सुख–दुख, यश–अपयश, प्रशंसा–निंदा –
" धर्मसार समुच्चयः सप्तमकुण्डली १२१"
परस्त्री के साथ एकांत में न बैठें, न यात्रा करें –
"बो.च.अ. ५/६२"
बुद्धिमान व्यक्ति के लिए परतंत्रता में निर्भीकता संभव नहीं –"चतुःशतम् ३"
दूसरों के धन से सर्प समान भय होना चाहिए कृष्सौन्दरानन्दम. ३/३१"
पाँच भय – आजीविका, शोक, मरण, दुर्गति, और राज्य –
"धर्मसारसमुच्चयः७१"
स्नेहवश नहीं, उद्देश्यपूर्ण नाव पार ले जाती है –
"सौन्दरानन्दम. १४.७"
राजा के लिए संयमित जीवन शैली की अपेक्षा है कृष्बुद्धचरितम११. ४८"
जो शास्त्र का अभ्यास कर आचरण नहीं करता, वह निन्दा योग्य है कृष्सौन्दरानन्दम. १८/२५"
धैर्य से विपत्तियों का पार होता है कृष्जातकमाला १४/२०"
धर्म लोककल्याण के लिए है –" सद्धर्मपुण्डरीक सूत्र. ५/३८"
प्रत्येक के लिए सभी दिशाएँ मंगलमय हों –
"सर्वादिशः शिखाः सन्तु सर्वेषां पथि वर्तिनाम" –बोधि
भोजन, जल, औषधि, धन – सबका उद्देश्य जीवन की कठिनाइयों का निवारण है –
"जातकमाला १२५"
स्त्रियों में उदारता को श्रेष्ठ आभूषण बताया गया – "बुद्धचरितम४.७०"
औषधि सेवन के बिना रोगमुक्ति नहीं होती – "बुद्धचरितम२५/७८"
जो संसार में ज्ञेय नहीं, वह भगवान बुद्ध के दर्शन में स्पष्ट है – "चतुःशतम् २७७"
सूत्रों के पाठ मात्र से पुण्य नहीं मिलता; आचरण आवश्यक है – " बोधिचर्यावतार ५/६०"
शिशु की परीक्षा कर प्रयत्न करना चाहिए, विरोध नहीं –"सौन्दरानन्दम्. १६/५२"

उपसंहार

बौद्ध काव्य अधिक भावनाप्रधान, सहज और कृत्रिमता रहित होते हैं। डॉ. द्विवेदी का मत है कि इनमें भावपक्ष प्रधान और कलापक्ष गौण होता है। इन ग्रंथों में तर्क की नवोन्मेषणा, उपमानों की अनुपमता, भावों की भव्यता, भाषा की सरलता, और कथन की मधुरता है। बौद्ध कवियों ने जहाँ शृंगार की अपेक्षा शान्त रस को महत्ता दी, वहीं समग्र मानवता का सजीव अंकन कर विश्व साहित्य में अपनी विशेष पहचान बनाई है।

पुस्तक सन्दर्भ

1. अवदानशतकम् – बोधिसत्व प्रकाशन, कलकत्ता।
2. चतुःशत आर्यवाद कृत – प्रकाशक – परिमल प्रकाशन, दिल्ली ।
3. जातकमाला आर्यसूरि कृत – प्रकाशक – चौखम्बा सूरभारती प्रकाशन, वनारस ।
4. तत्त्व संग्रह–आचार्य शांतरक्षित कृत – प्रकाशक – चौखम्बा सूरभारती प्रकाशन, वनारस ।
5. धर्मसार समुच्चयः – प्रकाशक – चौखम्बा सूरभारती प्रकाशन, वनारस ।
6. बुद्धिस्थ कन्ट्रीव्यूशन टू संस्कृत पोट्री , डा. मूलचन्द शास्त्री , प्रकाशक – परिमल प्रकाशन, दिल्ली ।
7. बुद्धचरितम् – अश्वघोष कृत, प्रकाशक – परिमल प्रकाशन, दिल्ली ।
8. बोधिचर्यावतार – शांतिदेवकृत , प्रकाशक – बोधिसत्व प्रकाशन, कलकत्ता।
9. बौद्ध संस्कृत काव्य समीक्षा, डा. रामायणप्रकाश द्विवेदी, प्रकाशक – काशी हिन्दू विश्व विद्यालय ।
10. ललित विस्तर सूत्र – प्रकाशक – परिमल प्रकाशन, दिल्ली ।
11. लंकावतार सूत्र – प्रकाशक – परिमल प्रकाशन, दिल्ली ।
12. शिक्षा समुच्चय–शांति देवकृत – प्रकाशक – परिमल प्रकाशन, दिल्ली ।
13. शून्यता सपातिः – आचार्य नागार्जुनकृत – प्रकाशक – परिमल प्रकाशन, दिल्ली ।
14. सद्धर्मपुण्डरीक सूत्र – प्रकाशक –चौखम्बा सूरभारती प्रकाशन, वनारस ।
15. सौन्दरनन्द – अश्वघोषकृत , प्रकाशक –परिमल प्रकाशन, दिल्ली ।